कहानी

गहरी जड़ें

अनवर सुहैल

असगर भाई बड़ी बेचैनी से जफर की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

जफर उनका छोटा भाई है।

उन्होंने सोच रखा है कि वह आ जाए तो फिर निर्णय ले ही लिया जाए, ये रोज-रोज की भय-चिंता से छुटकारा तो मिले!

इस मामले को ज्यादा दिन टालना अब ठीक नहीं।

कल फोन पर जफर से बहुत देर तक बातें तो हुई थीं।

उसने कहा था कि - 'भाईजान आप परेशान न हों, मैं आ रहा हूँ।'

असगर भाई 'हाइपर-टेंशन' और 'डायबिटीज' के मरीज ठहरे। छोटी-छोटी बात से परेशान हो जाते हैं।

मन बहलाने के लिए जफर बैठक में आए।

मुनीरा टीवी देख रही थी। जब से 'गोधरा-प्रकरण' चालू हुआ, घर में इसी तरह 'आज-तक' और 'स्टार-प्लस' चैनल को बारी-बारी से चैनल बदल कर घंटों से देखा जा रहा था। फिर भी चैन न पड़ता था तो असगर भाई रेडियो-ट्रांजिस्टर पर बीबीसी के समाचारों से देशी मीडिया के समाचारों का तुलनात्मक अध्ययन करने लगते।

तमाम चैनलों में नंगे-नृशंस यथार्थ को दर्शकों तक पहुँचाने की होड़-सी लगी हुई थी।

मुनीरा के हाथों से असगर ने रिमोट लेकर चैनल बदल दिया।

'डिस्कवरी-चैनल' में हिरणों के झुंड का शिकार करते शेर को दिखाया जा रहा था। शेर गुर्राता हुआ हिरणों को दौड़ा रहा था। अपने प्राणों की रक्षा करते हिरण अंधाधुंध भाग रहे थे।

असगर भाई सोचने लगे कि इसी तरह तो आज डरे-सहमे लोग गुजरात में जान बचाने के लिए भाग रहे हैं।

उन्होंने फिर चैनल बदल दिया। निजी समाचार-चैनल का एक दृश्य कैमरे का सामना कर रहा था। काँच की बोतलों से पेट्रोल-बम का काम लेते अहमदाबाद के बहुसंख्यक लोग और वीरान होती अल्पसंख्यक आबादियाँ। भीड़-तंत्र की बर्बरता को बड़ी ढीठता के साथ 'सहज-प्रतिक्रिया' बताता एक सत्ता-पुरूष। टेलीविजन पर चलती ढीठ बहस कि राज्य पुलिस को और मौका दिया जाए या कि सेना 'डिप्लाय' की जाए।

सत्ता-पक्ष और विपक्ष के बीच मृतक-संख्या के आँकड़ों पर उभरता प्रतिरोध। सत्ता-पक्ष की दलील कि सन चौरासी के कत्लेआम से ये आँकड़ा काफी कम है। उस समय आज के विपक्षी तब केंद्र में थे और कितनी मासूमियत से यह दलील दी गई थी -- 'एक बड़ा पेर गिरने से भूचाल आना स्वाभाविक है।'

इस बार भूचाल तो नहीं आया किंतु न्यूटन की गति के तृतीय नियम की धज्जियाँ जरूर उड़ाई गईं।

'क्रिया के विपरीत प्रतिक्रिया...'

असगर भाई को हँसी आ गई।

उन्होंने देखा टीवी में वही संवाददाता दिखाई दे रहे थे जो कि कुछ दिनों पूर्व झुलसा देने वाली गर्मी में अफगानिस्तान की पथरीली गुफाओं, पहाड़ों और युद्ध के मैदानों से तालिबानियों को खदेड़ कर आए थे, और बमुश्किल तमाम अपने परिजनों के साथ चार-छह दिन की छुट्टियाँ ही बिता पाए होंगे कि उन्हें पुनः एक नया 'टास्क' मिल गया।

अमेरिका का रक्त-रंजित तमाशा, लाशों के ढेर, राजनीतिक उठापटक, और अपने चैनल के दर्शकों की मानसिकता को 'कैश' करने की व्यवसायिक दक्षता उन संवाददाताओं ने प्राप्त जो कर ली थी।

असगर भाई ने यह विडंबना भी देखी कि किस तरह नेतृत्वविहीन अल्पसंख्यक समाज की विध्वसंक ओसामा बिन लादेन के साथ सहानुभूति बढ़ती जा रही थी।

जबकि 'डबल्यूटीओ' की इमारत सिर्फ अमरीका की बपौती नहीं थी। वह इमारत तो मनुष्य की मेधा और विकास की दशा का जीवंत प्रतीक थी। जिस तरह से बामियान के बुद्ध एक पुरातात्विक धरोहर थे।

'डबल्यूटीओ' की इमारत में काम करने का स्वप्न सिर्फ अमरीकी ही नहीं बल्कि तमाम देशों के नौजवान नागरिक देखा करते हैं। बामियान प्रकरण हो या कि ग्यारह सितंबर की घटना, असगर भाई जानते हैं कि ये सब गैर-इस्लामिक कृत्य हैं, जिसकी दुनिया भर के तमाम अमनपसंद मुसलमानों ने कड़े शब्दों में निंदा की थी।

लेकिन फिर भी इस्लाम के दुश्मनों को संसार में भ्रम फैलाने का अवसर मिल आया कि इस्लाम आतंकवाद का पर्याय है।

असगर भाई को बहुसंख्यक हिंसा का एकतरफा तांडव और शासन-प्रशासन की चुप्पी देख और भी निराशा हुई थी।

ऐसा ही तो हुआ था उस समय जब इंदिरा गांधी का मर्डर हुआ था।

असगर तब बीस-इक्कीस के रहे होंगे।

उस दिन वह जबलपुर में एक लॉज में ठहरे थे।

एक नौकरी के लिए साक्षात्कार के सिलसिले में उन्हें बुलाया गया था।

वह लॉज एक सिख का था।

उन्हें तो खबर न थी कि देश में कुछ भयानक हादसा हुआ है। वह तो प्रतियोगिता और साक्षात्कार से संबंधित किताबों में उलझे हुए थे।

शाम के पाँच बजे उन्हें कमरे में धूम-धड़ाम की आवाजें सुनाई दीं।

वह कमरे से बाहर आए तो देखा कि लॉज के रिसेप्शन काउंटर को लाठी-डंडे से लैस भीड़ ने घेर रखा था। वे सभी लॉज के सिख मैनेजर करनैल सिंह से बोल रहे थे कि वह जल्द से जल्द लॉज को खाली करवाए, वरना अन्जाम ठीक न होगा।

मैनेजर करनैल सिंह घिघिया रहा था कि स्टेशन के पास का यह लॉज मुद्दतों से परदेसियों की मदद करता आ रहा है।

वह बता रहा था कि वह सिख जरूर है किंतु खालिस्तान का समर्थक नहीं। उसने यह भी बताया कि वह एक पुराना कांग्रेसी है। वह एक जिम्मेदार हिंदुस्तानी नागरिक है। उसके पूर्वज जरूर पाकिस्तानी थे, लेकिन इस बात में उन बेचारों का दोष कहाँ था। वे तो धरती के उस भूभाग में रह रहे थे जो कि अखंड भारत का एक अंग था। यदि तत्कालीन आकाओं की राजनीतिक भूख नियंत्रित रहती तो बँटवारा कहाँ होता?

कितनी तकलीफें सहकर उसके पूर्वज हिंदुस्तान आए। कुछ करोलबाग दिल्ली में तथा कुछ जबलपुर में आ बसे। अपने बिखरते वजूद को समेटने का पहाड़-प्रयास किया था उन बुजुर्गों ने। शरणार्थी मर्द-औरतें और बच्चे सभी मिलजुल, तिनका-तिनका जोड़कर आशियाना बना रहे थे।

करनैल सिंह रो-रोकर बता रहा था कि उसका तो जन्म भी इसी जबलपुर की धरती में हुआ है।

भीड़ में से कई चिल्लाए - 'मारो साले को... झूट बोल रहा है। ये तो पक्का आतंकवादी है।'

उसकी पगड़ी उछाल दी गई।

उसे काउंटर से बाहर खींच गया।

जबलपुर वैसे भी मार-धाड़, लूट-पाट जैसे 'मार्शल-आर्ट' के लिए कुख्यात है।

असगर की समझ में न आ रहा था कि सरदारजी को काहे इस तरह से सताया जा रहा है।

तभी वहाँ एक नारा गूँजा -

'पकड़ो मारों सालों को
इंदिरा मैया के हत्यारों को!'

असगर भाई का माथा ठनका।

अर्थात प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या हो गई!

उसे तो फिजिक्स, केमिस्ट्री, मैथ के अलावा और कोई सुध न थी।

यानी कि लॉज का नौकर जो कि नाश्ता-चाय देने आया था सच कह रहा था।

देर करना उचित न समझ, लॉज से अपना सामान लेकर वह तत्काल बाहर निकल आए।

नीचे अनियंत्रित भीड़ सक्रिय थी।

सिखों की दुकानों के शीशे तोड़े जा रहे थे। सामानों को लूटा जा रहा था। उनकी गाड़ियों में, मकानों में आग लगाई जा रही थी।

असगर भाई ने यह भी देखा कि पुलिस के मुट्ठी भर सिपाही तमाशाई बने निष्क्रिय खड़े थे।

जल्दबाजी में एक रिक्शा पकड़कर वह एक मुस्लिमबहुल इलाके में आ गए।

अब वह सुरक्षित थे।

उसके पास पैसे ज्यादा न थे।

उन्हें परीक्षा में बैठना भी था।

पास की मस्जिद में वह गए तो वहाँ नमाजियों की बातें सुनकर दंग रह गए।

कुछ लोग पेश-इमाम के हुजरे में बीबीसी सुन रहे थे।

बातें हो रही थीं कि पाकिस्तान के सदर को इस हत्याकांड की खबर उसी समय मिल गई, जबकि भारत में इस बात का प्रचार कुछ देर बाद हुआ।

ये भी चर्चा थी कि फसादात की आँधी शहरों से होती अब गाँव-गली-कूचों तक पहुँचने जा रही है।

उन लोगों से जब उन्होंने दरयाफ्त की तो यही सलाह मिली - 'बरखुरदार! अब पढ़ाई और इम्तेहानात सब भूलकर घर की राह पकड़ लो, क्योंकि ये फसादात खुदा जाने जब तक चलें।

बात उनकी समझ में आई।

वह उसी दिन घर के लिए चल दिए। रास्ते भर उन्होंने देखा कि जिस प्लेटफार्म पर गाड़ी रुकी सिखों पर अत्याचार के निशानात साफ नजर आ रहे थे।

उनके अपने नगर में भी हालात कहाँ ठीक थे।

वहाँ भी सिखों के जान-माल को निशाना बनाया जा रहा था।

टीवी और रेडियो से सिर्फ इंदिरा-हत्याकांड और खालिस्तान आंदोलन के आतंकवादियों की ही बातें बताई जा रही थीं।

लोगों की संवेदनाएँ भड़क रही थीं।

खबरें उठतीं कि गुरुद्वारा में सिखों ने इंदिरा हत्याकांड की खबर सुन कर पटाखे फोड़े और मिठाइयाँ बाँटी हैं।

अफवाहों का बाजार गर्म था।

दंगाइयों-बलवाइयों को डेढ़-दो दिन की खुली छूट देने के बाद प्रशासन जागा और फिर उसके बाद नगर में कर्फ्यू लगाया गया।

यदि वह घिनौनी हरकत कहीं मुस्लिम आतंकवादियों ने की होती तो?

उस दफा सिखों को सबक सिखाया गया था।

इस बार...

जफर आ जाएँ तो फैसला कर लिया जाएगा।

जैसे ही असगर भाई कुछ समर्थ हुए, उन्होंने अपना मकान मुस्लिमबहुल इलाके में बनवा लिया था।

जफर तो नौकरी कर रहा है किंतु उसने भी कह रखा है कि भाईजान मेरे लिए भी कोई अच्छा सा सस्ता प्लॉट देख रखिएगा।

अब अब्बा को समझाना है कि वे उस भूत-बंगले का मोह त्याग कर चले आएँ इसी इब्राहीमपुरा में।

इब्राहीमपुरा 'मिनी-पाकिस्तान' कहलाता है।

असगर भाई को यह तो पसंद नहीं कि कोई उन्हें 'पाकिस्तानी' कहे किंतु इब्राहीमपुरा में आकर उन्हें वाकई सुकून हासिल हुआ था। यहाँ अपनी हुकूमत है। गैर दब के रहते हैं। इत्मीनान से हरेक मजहबी तीज-त्योहारों का लुत्फ उठाया जाता है। रमजान के महीने में क्या छटा दिखती है यहाँ। पूरे महीने उत्सव का माहौल रहता है। चाँद दिखा नहीं कि हंगामा शुरू हो जाता है। 'तरावीह' की नमाज में भीड़ उमड़ पड़ती है।

यहाँ साग-सब्जी कम खाते हैं लोग क्योंकि सस्ते दाम में बड़े का गोश्त जो आसानी से मिल जाता है।

फिजा में सुब्हो-शाम अजान और दरूदो-सलात की गूँज उठती रहती है।

'शबे-बरात' के मौके पर स्थानीय मजार शरीफ में गजब की रौनक होती है। मेला, मीनाबाजार लगता है और कव्वाली के शानदार मुकाबले हुआ करते हैं।

मुहर्रम के दस दिन शहीदाने-कर्बला के गम में डूब जाता है इब्राहीमपुरा!

सिर्फ मियाँओं की तूती बोलती है यहाँ।

किसकी मजाल की आँख दिखा सके। आँखें निकाल कर हाथ में धर दी जाएँगी।

एक से एक 'हिस्ट्री-शीटर' हैं यहाँ।

अरे, खालू का जो तीसरा बेटा है यूसुफ वह तो जाफरानी-जर्दा के डिब्बे में बम बना लेता है।

बड़ी-बड़ी राजनीतिक हस्तियाँ भी हैं जिनका संरक्षण इलाके के बेरोजगार नौजवानों को मिला हुआ है।

असगर भाई को चिंता में डूबा देख मुनीरा ने टीवी ऑफ कर दिया।

असगर भाई ने उसे घूरा -

'काहे की चिंता करते हैं आप... अल्लाह ने जिंदगी दी है तो वही पार लगाएगा। आप के इस तरह सोचने से क्या दंगे-फसाद बंद हो जाएँगे?'

असगर भाई ने कहा - 'वो बात नहीं, मैं तो अब्बा के बारे में ही सोचा करता हूँ। कितने जिद्दी हैं वो। छोड़ेंगे नहीं दादा-पुरखों की जगह... भले से जान चली जाए।'

'कुछ नहीं होगा उन्हें, आप खामखाँ फिक्र किया करते हैं। सब ठीक हो जाएगा।'

'खाक ठीक हो जाएगा। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या करूँ? बुढ़ऊ सठिया गए हैं और कुछ नहीं। सोचते हैं कि जो लोग उन्हें सलाम किया करते हैं मौका आने पर उन्हें बख्श देंगे। ऐसा हुआ है कभी। जब तक अम्मा थीं तब तक ठीक था अब वहाँ क्या रखा है कि उसे अगोरे हुए हैं।'

मुनीरा क्या बोलती। वह चुप ही रही।

असगर भाई स्मृति के सागर में डूब-उतरा रहे थे।

अम्मा बताया करती थीं कि सन इकहत्तर की लड़ाई में ऐसा माहौल बना कि लगा उजाड़ फेंकेंगे लोग। आमने-सामने कहा करते थे कि हमारे मुहल्ले में तो एक ही पाकिस्तानी घर है। चींटी की तरह मसल देंगे।

'चींटी की तरह... हुँह..' असगर भाई बुदबुदाए।

कितना घबरा गई थीं तब वो। चार बच्चों को सीने से चिपकाए रखा करती थीं।

अम्मा घबराती भी क्यों न, अरे इसी सियासत ने तो उनके एक भाई की पार्टीशन के समय जान ले ली थी।

'जानती हो पिछले माह जब मैं घर गया तो वहाँ देखा कि हमारे घर की चारदीवारी पर स्वास्तिक का निशान बनाया गया है। बाबरी मस्जिद के बाद उन लोगों का मन बढ़ गया है। मैंने जब अब्बा से इस बारे में बात की तो वह जोर से हँसे और कहे कि ये सब लड़कों की शैतानी है। ऐसी-वैसी कोई बात नहीं। अब तुम्हीं बताओ कि मैं चिंता क्यों न करूँ?'

'अब्बा तो हँसते-हँसते ये भी बताए कि जब 'एंथ्रेक्स' का हल्ला मचा था तब चंद स्कूली बच्चों ने चाक मिट्टी को लिफाफे में भरकर प्रिंसिपल के पास भेज दिया था। बड़ा बावेला मचा था। अब्बा हर बात को 'नार्मल' समझते हैं।'

'अब्बा तो वहाँ के सबसे पुराने वाशिंदों में से हैं। सुबह-शाम अपने बच्चों को 'दम-करवाने' सेठाइनें आया करती हैं। अबा के साथ कहीं जाओ तो उन्हें कितने गैर लोग सलाम-आदाब किया करते हैं। उन्हें तो सभी जानते-मानते हैं।' मुनीरा ने अब्बा का पक्ष लिया।

'खाक जानते-मानते हैं। आज नौजवान तो उन्हें जानते भी नहीं और पुराने लोगों की आजकल चलती कहाँ है? तुम भी अच्छा बताती हो। सन चौरासी के दंगे में कहाँ थे पुराने लोग? सब मन का बहकावा है। भीड़ के हाथ में जब हुकूमत आ जाती है तब कानून गूँगा-बहरा हो जाता है।'

मुनीरा को लगा कि वह बहस में टिक नहीं पाएगी इसलिए उसने विषय-परिवर्तन करना चाहा -

'छोटू की 'मैथ्स' में ट्यूशन लगानी होगी। आप उसे लेकर बैठते नहीं और 'मैथ्स' मेरे बस का नहीं।'

'वह सब तुम सोचो। जिससे पढ़वाना हो पढ़वाओ। मेरा दिमाग ठीक नहीं। जफर आ जाए तो अब्बा से आर-पार की बात कर ही लेनी है।'

तभी फोन की घंटी घनघनाई।

मुनीरा फोन की तरफ झपटी। वह फोन घनघनाने पर इसी तरह हड़बड़ा जाती है।

फोन जफर का था, मुनीरा ने रिसीवर असगर भाई की तरफ बढ़ा दिया।

असगर भाई रिसीवर ले लिया -

'वा अलैकुम अस्स्लाम! जफर...! कहाँ से? यहाँ मैं तुम्हारा इंतजार कर रहा हूँ।'

... ...

'अब्बा पास में ही हैं क्या? जरा बात तो कराओ।'

मुनीरा की तरफ मुखातिब होकर बोले - 'जफर भाई का फोन है। यहाँ न आकर वह सीधे अब्बा के पास से चला गया है।'

'सलाम वालैकुम अब्बा... मैं आप की एक न सुनूँगा। आप छोड़िए वह सब और जफर को लेकर सीधे मेरे पास चले आइए।'

पता नहीं उधर से क्या जवाब मिला कि असगर भाई ने रिसीवर पटक दिया।

मुनीरा चिड़चिड़ा उठी -

'इसीलिए कहती हूँ कि आप से ज्यादा होशियार तो जफर भाई हैं। आप खामखाँ 'टेंशन' में आ जाते है। डॉक्टर ने वैसे भी आपको फालतू की चिंता से मना किया है।'

बस इतना सुनना था कि असगर भाई हत्थे से उखड़ गए।

'तुम्हारी इसी सोच पर मेरी सुलग जाती है। मेरे वालिद तुम्हारे लिए 'फालतू की चिंता' बन गए। अपने अब्बा के बारे में चिंता नहीं करूँगा तो क्या तुम्हारा भाई करेगा?'

ऐसे मौकों पर मुनीरा चुप मार ले तो बात बढ़े। अपने एकमात्र भाई के बारे में अपशब्द वह बर्दाश्त नहीं कर पाती है, किंतु जाने क्यों मुनीरा ने आज जवाब न दिया।

असगर भाई ने छेड़ा तो था किंतु मुनीरा को चुप पाकर उनका माथा ठनका, इसलिए सुलहकुन आवाज में वह बोल -

'लगता है कि अब्बा नहीं मानेंगे, वहीं रहेंगे...!'

■ ■ ■

शीर्ष पर जाएँ